

परश्चरणम्



रचयिता

श्री सूर्यप्रकाश गोस्वामी



श्री पीताम्बरा-संस्कृत-परिषद्
दत्तिया (म. प्र.)

✽ ॐ तत्सत् ✽

परश्चरणम्

(हिन्दी काव्य)



रचयिता

श्री सूर्यप्रकाश गोरुवामी



श्री पीताम्बरा संस्कृत परिषद

दत्तिया (म० प्र०)

प्रकाशक :

श्री पीताम्बरा-संस्कृत-परिषद्
दतिया (म० प्र०)

सर्वाधिकार
प्रकाशकायत्त

प्रथमावृत्ति : १-११-७२

द्वितीयावृत्ति : २७-६-६२

(शारदीय नवरात्र)

मुद्रक :

आकाश प्रिंटर्स

बिहारी जी मार्ग, दतिया

मूल्य : ५/- रुपये

-: भूमिका :-

भारतीय संस्कृति में गुरु का महत्व सर्वमान्य, सर्वानुभूत एवं सर्वोपरि है। 'बिन गुरु होय न ज्ञान' गुरु गोविन्द दोनों खड़े काके लागू पाँय। बलिहारी गुरु आपकी गोविन्द दियो बताय' आदि वाक्य गुरु की महिमा एवं गरिमा के द्योतक हैं। गुरु शब्द गृ निगरणे धातु से निष्पन्न होता है। गृणाति उप-दिशति तत्त्वं इति गुरुः। जो तत्त्व का उपदेश करे वह गुरु है। अन्य संप्रदायों की अपेक्षा आगम सम्प्रदाय में गुरु पर सर्वाधिक विचार किया गया है। गुरु शब्द में ग सिद्धि का, र पापक्षय का एवं उ भगवान विष्णु का बोधक है। पापों का क्षय करके अभीष्ट फल प्रदान करने वाला विष्णुस्वरूप गुरु है।

गकारः सिद्धिदः प्रोक्तो रेफः पापस्य हारकः ।

उकारो विष्णुरव्यक्तस्त्रिनयात्मा गुरुः परः ॥

गुरु शब्द की व्याख्या इस प्रकार भी की जाती है। गुरु शब्द में ग अन्धकार का एवं रु निरोध का बोधक है। इस प्रकार अन्धकार का निरोधक ही गुरु है।

गु शब्दस्त्वंधकारः स्यात्, रु शब्द स्तस्त्रिरोधकः ।

श्रंधकार निरोधत्वात्, गुरु इत्यभिधीयते ॥

शास्त्रीय दृष्टि से गुरु शब्द का संक्षिप्त निर्वचन किया गया। साधना में गुरु का स्वरूप अनुभूति का विषय है। कोई भी साधक अपनी साधना में गुरुपदिष्ट साधन विधि के बिना सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता। गकारः सिद्धिदः से यह बात भली भाँति स्पष्ट है। लोक व्यवहार में वह गुरु जो मूर्त एवं शरीरधारी है साधना में वही अमूर्त, अव्यक्त व योगानुभूति का

विषय है। ब्रह्मरन्ध्र में सहस्रार के कुछ नीचे द्वादसवर्णात्मक त्रिकोणस्वरूप गुरु का स्थान है। इसे गुरु मण्डल कहते हैं। इसी गुरु मण्डल में गुरु का ध्यान किया जाता है। मूलाधार चक्र से गुरु मण्डल तक की स्थिति योगी षट् चक्र भेदन की क्रिया से प्राप्त कर लेता है। यहां तक योगी को द्वैत का भान रहता है। पूर्णाद्वैतावस्था की स्थिति गुरु मण्डल के ऊपर है। यह निर्विकल्पावस्था है। यहीं पर गुरु की कृपा की आवश्यकता साधक को अनुभव होती है। गुरु ज्ञान का प्रतीक है। गुरु मण्डल के आगे की स्थिति साधक को गुरु कृपा से ही प्राप्त होती है। कवि ने इसी गुरु तत्व का ध्यान सांकेतिक भाषा में इस प्रकार किया है—

वाणि, हलेखा, श्री सुख धाम,
ह स क्ष म ल व र यूं पूर्ण प्रकाम ।

तान्त्रिक शब्दावली का प्रयोग होते हुये भी प्रवाह अक्षुण्ण है।

कुलकवि श्री सूर्यप्रकाश गोस्वामी प्रणीत गुरु तत्व विषयक गीतों का संग्रह “परश्चरणम्” नाम से प्रकाशित किया जा रहा है। गीतों का विषय गुरु तत्व है। गुरु भक्ति के भावों से ओत-प्रोत ये गीत गुरु भक्ति की ओर आकृष्ट करने में पूर्ण समर्थ हैं। प्रत्येक गीत की प्रत्येक पंक्ति गुरु-चरणों के प्रति चित्त को भावोद्वेलित एवं चमत्कृत करने वाली है। ऐसे गुह्य एवं अनुभूतिपरक विषय का प्रासाद-माधुर्य गुण युक्त प्रवाहमयी गेय भाषा में छन्दोबद्ध करना गुरुकृपा सिद्ध कुलकवि की लेखनी का कार्य सर्वथा स्तुल्य है।

धन्य है लेखनी :—

धन्य भाग्य हो गई लेखनी
श्री प्रभु का गौरव गुण गाकर

गुरु में पूर्ण आस्था ही ईश्वर प्राप्ति हेतु है । कवि के
ही शब्दों में सुनिये—

आस्था गुरुदेव के प्रति जिस हृदय में हो गई,
हर घड़ी भगवान उसकी श्वास के भी पास है ।

लोक व्यवहार में गुरु का वह रूप जो हमें प्रत्यक्ष दिखाई
देता है, योगानुभूति में वह प्रमाण प्रमेय से परे अव्यक्त एवं
अमूर्त है :—

“अनुमानों से परे परम अज्ञेय सदा व्यक्तित्व तुम्हारा”

सभी धार्मिक सम्प्रदायों में गुरु के प्रति श्रद्धा को
प्रधानता दी गई है । योगाभ्यास में भी गुरुपदिष्ट साधन
विधि से ही साधक कामना अरण्य रोदन के समान है । कवि
का यह भाव कितना हृदयग्राही है :—

“गुरु श्रद्धा के रहित सभी साधन अरण्य में रोदन”

गुरु तत्त्व में अभेद माना जाता है । “यस्य देवे पराभक्तः
यथा देवे तथा गुरौ ।” वेद श्रुति का अनुगमन करते हुये कवि
ने भी तो यही गान गाया है—

तुम देश काल से हीन उभय के संचारी ।

त्रिपुर सुन्दरी रूप, तुम्हीं हो त्रिपुरारी ॥

कवि का गुरु ही सर्वस्व है। गुरु कृपा के अतिरिक्त अन्य उसका अभीष्ट नहीं। कवि अद्वैतावस्था का आनन्द प्राप्त नहीं करना चाहता। उसे कैवल्य भी नहीं चाहिये :—

नाथ का प्राप्त हुआ वात्सल्य ।

करुंगा क्या लेकर कैवल्य ॥

नहीं कामना प्राप्त तुम्हें कर पाऊं स्वामी ।

तुम्हें प्राप्त कर और द्वैत का सुख खो दूंगा ॥

कवि का प्रवृत्ति मार्गी यह दृष्टिकोण कितना व्यवहारोपयोगी व श्रेयस्कर है। यह तो कवि के विचारों और उसकी भावनाओं का संक्षिप्त दिग्दर्शन हुआ। कवि के अन्तस्तल से निकले हुये हृदयोद्गारों का पूर्ण आनन्द पाठक वृन्द इन गीतों के पुनः पुनः लयबद्ध गायन से ही प्राप्त कर सकेंगे। गीतों में काव्य का सौन्दर्य और सङ्गीत की लय सहृदय पाठकों के हृदय को भक्ति रस विभोर किये बिना न रहेगी इसी विश्वास के साथ गुरु देव का स्मरण कर, और उन्हीं से इस कृति के प्रचार व प्रसार की कामना करता हुआ क्षमा याचना करता हूँ।

गृणीते तत्त्वमात्मीयमात्मीकृत जगत्त्रयम् ।

उपायोपेयरूपाय तस्मै श्री गुरुवे नमः ॥

श्री पीताम्बरा पीठ, दतिया विनीत :

१—११—७२ रामेश्वर तिवारी

समर्पणम्



मां ! तूने जो 'मा-मा' करना मुझे सिखाया
देख, भला तो, क्या न अभी वह मुझको आया

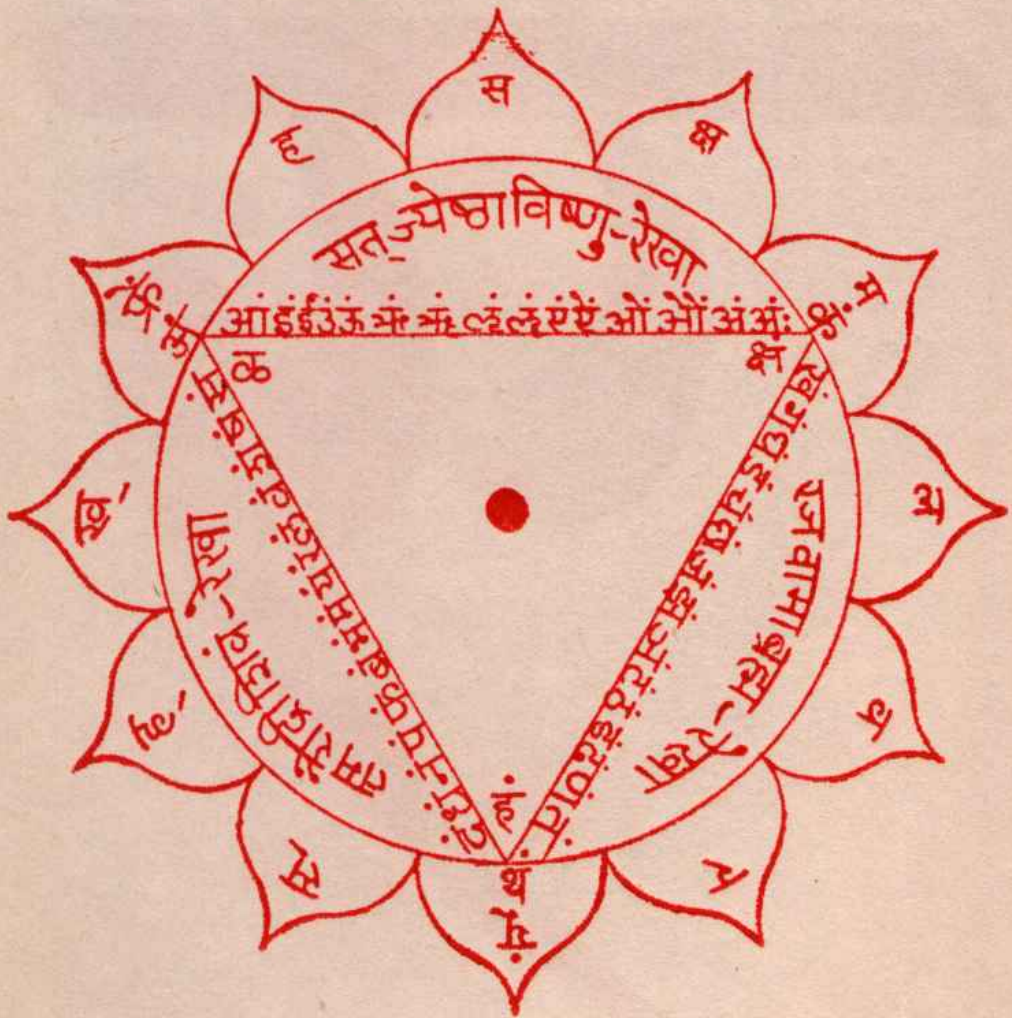
तेरा ही—
अबोध शिशु



वन्दे गुरु पद द्वन्द्व मवाङ् मनस गोचरम् ।
रक्त शुक्ल प्रभा मिश्र मतक्यं त्रैपुरं महः ॥

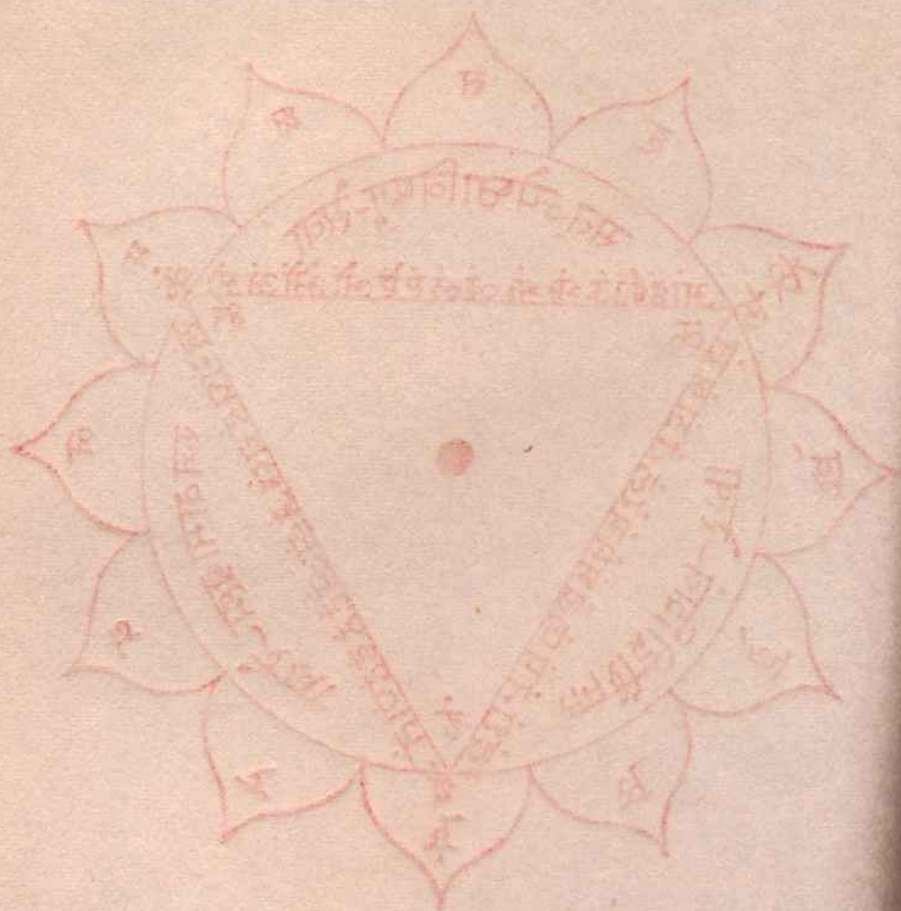
ॐ

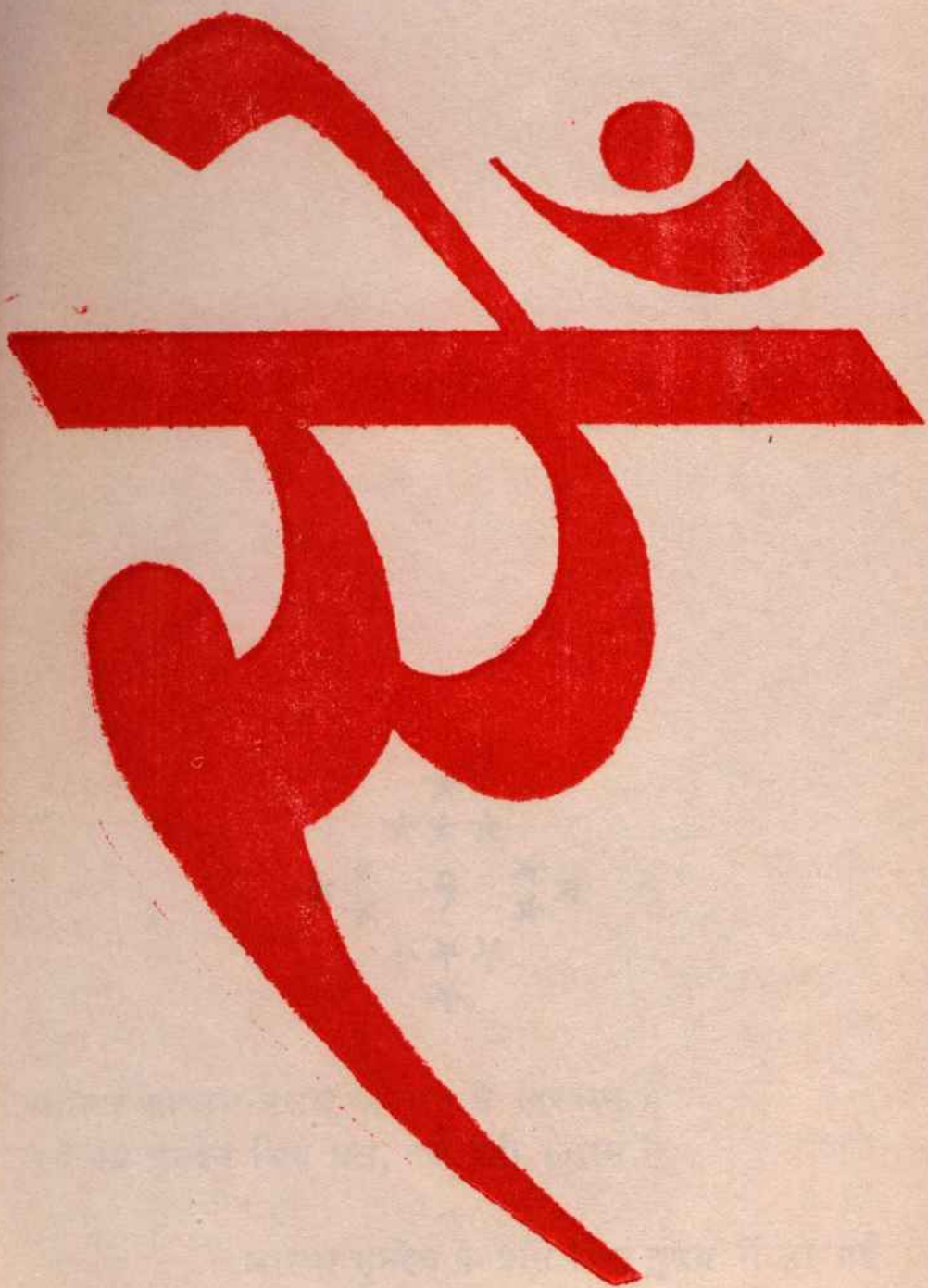
श्रीगुरु-मण्डलम्

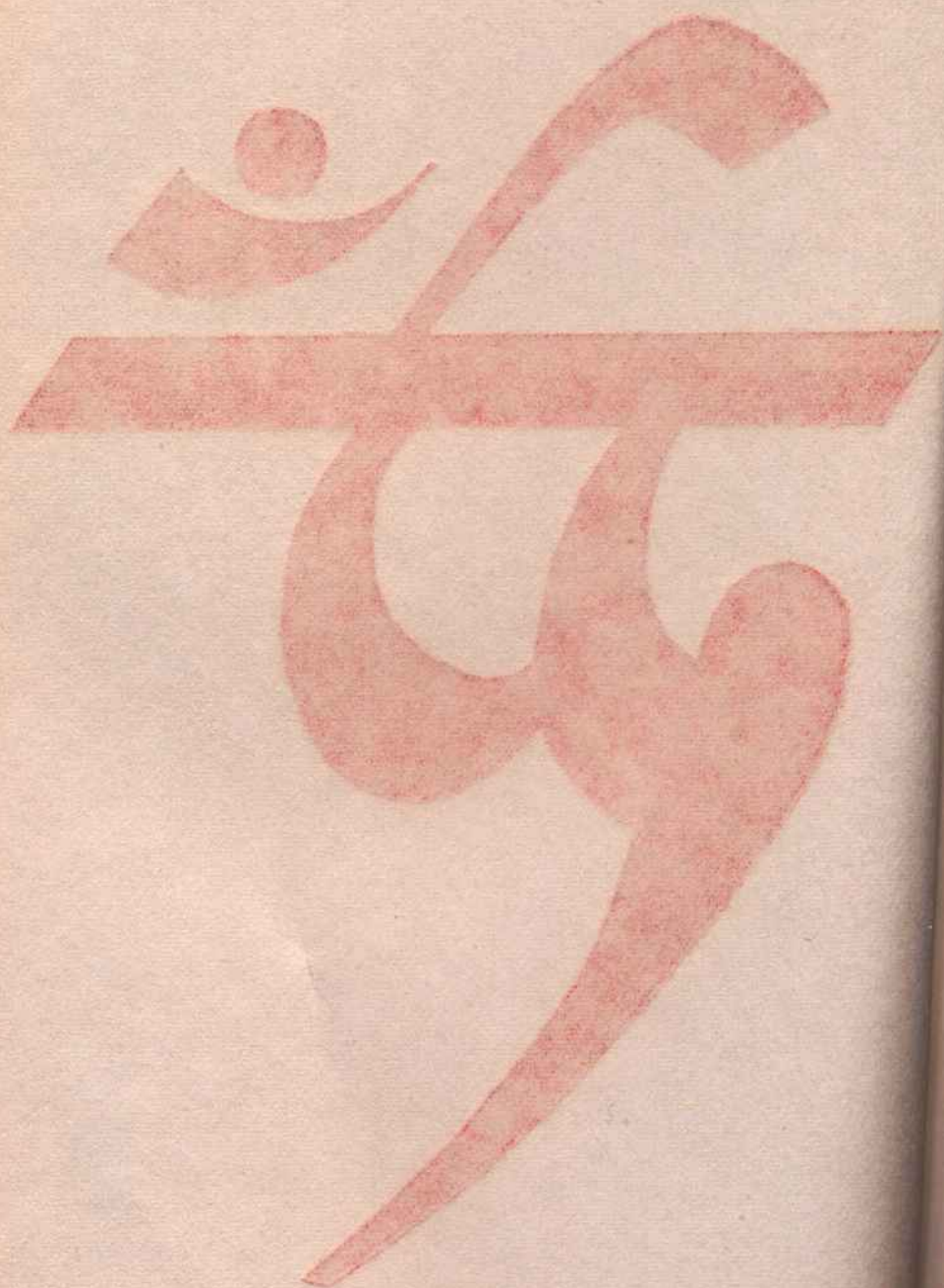


ॐ

सुखदाम-सुखी









विश्व के विपन्नता इस लोक ! इतिहस है यह सब
 प्रजापति की प्रतिमा - इस में सब के लिए सब
 भगवान् प्रजापति तबों के लिए सब विपन्नता
 प्रजापति प्रजापति के लिए सब विपन्नता
 प्रजापति प्रजापति के लिए सब विपन्नता
 प्रजापति प्रजापति के लिए सब विपन्नता



साधना का अथ-अलम् श्रीनाथ में विश्वास है
 रम गये गुरुदेव जिस थल, वस वही कैलास है

आस्था गुरुदेव के प्रति जिस हृदय में हो गई
 हर घड़ी भगवान् उसकी श्वास के भी पास है



जय जय, हे गुरुदेव ! जयति जय वनखण्डी के स्वामी
भक्त जनों के हेतु सर्वदा आशुतोष शिवशंकर
पाखण्डी पापी जन के हित महाकाल प्रलयंकर
जग संतप्त जीव लख होते करुणामय दृग कातर
निर्भयता प्रसाद पाकर होते संतुष्ट भयातुर

विश्व-विदित होकर भी रहते जग में सदा अनामी
जय जय, हे गुरुदेव ! जयति जय वनखण्डी के स्वामी

उद्बोधित मंत्रों के दाता, साधक-भाग्य-विधाता
शक्ति-तत्त्व उद्गाता, ज्ञाता, जन जन सिद्धि - प्रदाता
शाक्त-धर्म के प्राण, वेद-मणि, ध्यान, ध्येय-ध्रुव, ध्याता
त्याग-मूर्ति, हे महाभाग, हे ज्ञान, ज्ञेय, गुरु, ज्ञाता
वीतराग, सन्यासी, साधन—सिद्ध पूर्ण—निष्कामी

जय जय, हे गुरुदेव ! जयति जय वनखण्डी के स्वामी
हे दर्शन के सार, ज्ञान के उद्वेलित रत्नाकर
घोर अविद्या की रजनी में विद्या रूप सुधाकर
परममुक्ति के द्वार, दीन जग के आधार, कृपाकर
कोटि-कोटि अज्ञान-तिमिर हर, पदनख-ज्योति दिवाकर
हे पूर्णत्व प्राप्त, हे ऋषिवर, कुरु निज पद अनुगामी
जय जय, हे गुरुदेव ! जयति जय वनखण्डी के स्वामी



आरण्यक युग की परम्परा बन-खण्डी में पनप रही है
जहां धर्म की महक सदा चम्पक-पुष्पों से गमक रही है

जहां देख प्रत्यक्ष सामने तर्क चरण-तल में झुकता है
सिंहासन का दम्भ, त्याग के सन्मुख, नित पानी भरता है

गैरिक परिधानों के सन्मुख, राज-मुकुट होते नत-मस्तक
अभिमानी शासक अनुशासक बने हुये हैं जिनके हस्तक

जहां नास्तिकों की हठ-धर्मी बन जाती है स्वयं नपंसुक
जहां भक्त जन श्रद्धा-पूरित बन जाते मां के आराधक

जहां सत्य की खुली हुई है स्वयं सिद्ध स्वामी-सी पुस्तक
जहां धर्म ही मूर्तिमान बैठा है अग- जग का संरक्षक

जिनका कृपा प्रसाद प्राप्त कर महा मूढ़, विद्वान हो गये
सदाचार से रहित अनेकों पापी, नीति-निधान हो गये

जिनकी सेवा से दरिद्र-जन, लक्ष्मी-सुत धनवान हो गये
आश्रय-हीन अनेकों, जिनका आश्रय पा, बलवान हो गये

जहां साधना रहित अज्ञ का, साध्य स्वयं साकार हो गया
जहां पांव धरते ही मां का ममता भरा दुलार हो गया

जहां पथिकको गति, अन्तस्को श्रद्धामय विश्वास मिल गया
जहां आस्था को युग-युग से खोया हुआ प्रकाश मिल गया

जहां भग्न वीणा को सरगम की नूतन झंकार मिल गई
जहां शक्ति-जागृति को प्राणापान मध्य हुंकार मिल गई

जहां भक्ति को कलिमें सचमुच ईश्वर का अवतार मिल गया
जहां डूबती नौका को माझी का दृढ़ आधार मिल गया

जहां हमारे बन्धन मंगलकारी बन्दनवार हो गये
दुर्निवार प्रारब्ध कर्प भी, मोक्ष-मार्ग के द्वार हो गये

उस दतिया के दाता, भारत-भाग्य-विधाता का बन्दन है
वन-खण्डी के स्वामी जी का भाव-सुमन ले अभिनन्दन है



वीत राग सन्यासी, प्रतिभाशाली, स्वामी
राग-द्वेष से रहित, कीर्ति से विमुख, अनामी

सौम्य मूर्ति, तेजस्वी, साधन-सिद्ध, तपस्वी
अन्तर्यामी, मेधा से सम्पन्न, मनस्वी
महा प्राण, मूर्धन्य निरन्तर जय - व्रत - धारी
सींच रहे कर सरस, सूखतो संस्कृति क्यारी

दर्शन, ज्योतिष, तन्त्र मन्त्र के अद्भुत ज्ञाता
दशों महा विद्याओं के उत्तम उद्गाता

शक्ति उपासक, शाक्त धर्म के प्राणधुरन्धर
गौर मूर्ति, आनन्द रूप, दृढ़ काया सुन्दर

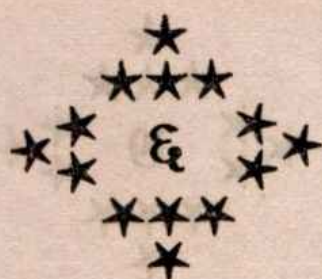
स्वाध्यायी नियमित जीवन के चिर अभ्यासी
ब्रह्मचर्य, व्रत, पालक, जीवन- मुक्ति- उदासी
ज्योतिमान निष्कम्प साधना दीप- शिखा-सी
भासमान है शक्ति आज मध्यान्ह प्रभा- सी



जिनका दर्शन मात्र काटता बन्धन है
जिनकी पावन रज मस्तक का चन्दन है
श्री चरणों में श्रद्धा अनुदित विकसित हो
शिव स्वरूप गुरुदेव ! तुम्हारा वन्दन है

जिन चरणों का ध्यान-मात्र अध-मर्षण है
जिनके वचन, सुधा के रस का वषण है
जिनके पद—नख चिन्तामणि प्रत्यक्ष सदा
आशुतोष गुरुदेव ! तुम्हारा वन्दन है
जिनका सौम्य स्वरूप हृदय का स्पन्दन है
जिनका भव्य ललाट ज्ञान का दर्पण है
परम पुरुष गुरुदेव ! तुम्हारे चरणों में
भाव सुमन का होता प्रतिदिन अर्पण है

परम त्याग मय, उज्ज्वल, सात्विक जीवन है
जिनके तप से बन—खण्डी नन्दन—बन है
अम्ब शारदा की वीणा—स्वर—लहरी से
राष्ट्रदेव का कोटि—कोटि अभिनन्दन है
पद पद्मों में मन-अलि का नित गुञ्जन हो
शुद्ध चित्त से सौम्य मूर्ति का चिन्तन हो
तन गुरु—सेवा—हित प्रति पल सन्नद्ध रहे
वाणी से गुरु—गौरव का नित वन्दन हो



हे वनखण्डी-स्वामी, गुरुवर ! सदा तुम्हारी जय हो
श्रीपद रज में हृदय, प्राण, मन, बुद्धि, अहं का लय हो

परम रम्य सुख-धाम तपस्या-पूत अनूप तपोवन
वन-खण्डी विख्यात विश्व में नन्दन-वन से पावन
शुभ्र तडाग तरङ्गित सन्मुख सुख-दायक अति उपवन
ह्रींकार ध्वनि से करते हैं भ्रमर जहां पर गुञ्जन
स्वयं प्रकट शिव हुये आज हैं कलि में भव-भय-भञ्जन
दिव्य दृष्टि का दाता जिनकी पद-रज का शुचि अञ्जन

उनका कृपा-प्रमाद प्राप्त कर मुझे आज क्या भय हो
श्रीपद-रज से हृदय, प्राण, मन, बुद्धि, अहं का लय हो

जिनकी भृकुटि-विलास मात्र से महा-प्रलय हो जाता
महाकाल, मृत्युञ्जय, जिनका यश पुराण है गाता
आशुतोष, शिव, शंकर, औढरदानी, भव-भय-त्राता
ज्योतिलिङ्ग जो महादेव, प्रलयंकर, रुद्र कहाता
वही सदाशिव स्वयं सुशोभित बन दतिया का दाता
सकल क्षोभ हर, परम शान्तिकर, दिव्यानन्द प्रदाता

जिनका नाम मात्र जपते ही षड्रिपु-समर विजय हो
श्रीपद-रज में हृदय, प्राण, मन, बुद्धि, अहं का लय हो

मर्षण है
वर्षण है
क्ष सदा
न्दन है

वन है
वन है
री से
न है



अनुमानों से परे परम अज्ञेय सदा व्यक्तित्व तुम्हारा
कोटि शेष भी कह सकते क्या चिन्मय शाश्वततत्त्व तुम्हारा

परशुराम के पौरुष के तुम हो प्रतीक वनखण्डी-वासी
अन्तस् में विजिरीषु-वृत्ति की वज्र लीक धारे सन्यासी
आदर्शों के प्राण, सनातन मर्यादा के रक्षक हो तुम
अडिग हिमाचल के समान-व्रत पालक, उन्नत-मस्तक हो तुम

प्रभु के रोम-रोम से निसृत निगमागम की सत्य ऋचाएँ
श्री गुरु-बुद्धि विलास मात्र है षड्दर्शन की भव्य विधाएँ
त्याग मार्ग के अनासक्त आराध्यदेव-शुचिरूप तुम्हारा
तपः तेज से अजर अमर है, पावन भारत वर्ष हमारा

शाक्तधर्म उद्धार पुनः करने आये हो परम तपस्वी
धीर, वीर, गभीर, ज्ञान की आभा ले उद्दीप्त मनस्वी
पाखण्डी चीनी घबराया वनखण्डी ने ली अंगड़ाई
भगा विचारा, स्वच्छ व्योम में विजयध्वजा पीली लहराई

पीर हरी आरत भारत की बार-बार प्रभु का वन्दन है
शक्ति-हीन कर दिया चीन को महावीर का अभिनन्दन है
दमक रहा है प्रखर तेज परिपूर्ण, अडिग निश्चय ध्रुव तारा
गौरव का गढ़ बना हुआ है यह वनखण्डी का गुरु-द्वारा !

तुम्हारा
तुम्हारा
ण्डी-वासी
रे सन्यासी
हो तुम
हो तुम
य ऋचाएँ
य विधाएँ
म्हारा
हमारा
तपस्वी
मनस्वी
गड़ाई
हराई
नन्दन है
नन्दन है
गारा
गारा !



अभय - दान देती है गुरुवर के दृढ़ कर की छाया
बाल नहीं बांका कर सकती विश्व - मोहिनी माया

सकल साधना मूल एक श्रीगुरु पद - आत्म - समर्पण
गुरु चरणों में गहन प्रीति ही जगदम्बा का अर्चन
गुरु श्रद्धा से रहित सभी साधन अरण्य में रोदन
मेरे प्राण, हृदय, मन, काया श्री-चरणों में अर्पण

कारण रहित कृपा-सागर ने कर करुणा अपनाया
बाल नहीं बांका कर सकती विश्व - मोहिनी माया

करुणा दृष्टि निहार साधकों के संस्कार जगाते
दीक्षा देकर जो कि साधना का रहस्य समझाते

अन्तर्मुख कर देते पल में घट में अलख लखाते
पाशबद्ध पशुओं को शिव कर, जीवन-मुक्त बनाते

मृत्युञ्जय उन शिव शंकर ने भव-भ्रम-जाल मिटाया
बाल नहीं बांका कर सकती विश्व मोहिनी माया

जो उत्पत्ति, पालन, लय कारिणी-पीताम्बर तनु धारी
जो षड्विंशत् तत्त्व, वर्ण मयि, अग जग की महतारी

स्थूल रूप धर वनखण्डी में शोभित सो सुख कारी
गैरिक वसन सुशोभित, त्यागी, सुधा कमण्डलु-धारी

माँ, तुम शुभ्र प्रकाश और मैं हूँ प्रकाश की छाया
बाल नहीं बांका कर सकती विश्व-मोहिनी माया

आज्ञा पालन मात्र तुम्हारी, ध्येय बने जीवन का
केन्द्र तुम्हीं बस बनो अहर्निशि ध्यान और चिन्तन का

मुझे भरोसा नहीं देव ! आराधन, जप-पूजन का
शरण तुम्हारी आया, अर्पित करने सुमन सु-मन का

अङ्गीकार करो हे स्वामिन् ! भावाञ्जलि भर लाया
बाल नहीं बांका कर सकती विश्व-मोहिनी माया

खाते
नाते

मिटायी
माया

री
री

री
री

छाया
माया

ग
ग

लाया
माया



हो गया आज कण-कण क्षिति का वनखण्डी-सा
जब से वनखण्डी-वासी प्राण निवासी है
सारे अभाव क्षण भर में हुये तिरोहित-से
सम्पूर्ण सृष्टि में दिखती श्रीविद्या-सी
है विदित किसे इस स्थूल काय के अन्तर्गत
उक्त महाशक्ति की स्फुरणा प्रतिपल थिरक रही
है विदित किसे तेजस्वी उन्नत मस्तक में
उस परम ज्योति की आभा प्रति-पल दमक रही

हे ! प्रभो तुम्हारी वाणी का माध्यम बनकर
 मां, परम पुनीता, पीता ही है सद्य हुई
 इस दिव्य मुखाकृति के सन्मुख कृत्याएं सब
 निज विकट ज्वाल में स्वयं दग्ध हो विलय हुई
 तुम क्रान्ति दर्शियों के विचार के अमर केन्द्र
 तुम युवकों के आराध्य देव तरुणार्ई हो
 तुम भ्रान्त वृत्तियों के शामक ज्ञानी शङ्कर
 तुम महाकाल, मन्वन्तर की अंगड़ाई हो
 तुम स्थूल नहीं हो, सूक्ष्म तत्व के स्पन्दन हो
 गुरुदेव रूप में स्वयं पधारीं माँ ही हो
 युग-युग से चिर निद्रा निमग्न इस बालक को
 तुम भैरव बनकर आज जगाने आई हो ।



बनकर
दय हुई
सब
लय हुई
केन्द्र
ई हो
शङ्कर
ई हो
न हो
ही हो
को
हो ।



सत्य है, गुरुदेव की मैं सर्व-प्रिय सन्तान हूं
मर्त्य जग में अमर, जीवन, मुक्त, चेतन, प्राण हूं
सकल फल दायिनी चरण-रज से बना गुरुदेव के
स्नेह-मद-विह्वल अधर पर खिलती मुस्कान हूं

कीर्ति- गायन मात्र से होता सदा कल्याण है
नाम जपने मात्र से मिलता अलौकिक ज्ञान है
स्वप्न में भी ध्यान में आती कभी यदि पादुका
ब्रह्म पदवी प्राप्त करता जीव का निर्वाण है

भय उसे होता यहां जो मंत्र दीक्षा हीन है
भग्न वीणावत् हृदय के तंत्र का स्वर क्षीण है
वरण जिसने कर लिया गुरुदेव का सौभाग्य से
विश्व में शंकर सरीखा वह बिना कौपीन है

‘ललित गणपति, ‘चन्द्रकान्ता’ शैलजा है वाम में
आज है कैलाश की कलकान्ति मेरे धाम में
नाथ के वात्सल्य- दृग ने है मुझे शंकर किया
है-नवण्ठी, सप्तमी ही तत्पुरुष अब नाम में



वासना के खग हृदय का नीड़ तजकर उड़ गये
 प्रेय पथ से पांव बरबस श्रेय पथ को मुड़ गये
 जिस समय गुरुदेव ने डमरू बजाया ज्ञान का
 दिव्य-गुण दानव-दलन का लक्ष्य लेकर बढ़ गये
 ज्ञान के हिन्दोल से अज्ञान के तृण उड़ गये
 बोलकर 'जय' साधना के शैल पर पग चढ़ गये
 शीश पर गुरुदेव सम जगदीश ने जब कर धरा
 पाश मेरे अंगुली निर्देश से ही झड़ गये
 गीतिका को तुक मिली अज्ञेय मुक्तक मिल गया
 एक आहट से युगो का बन्द फाटक खुल गया
 वर्तिका गुरुदेव के सुस्नेह से गीली हुई
 तेज पाकर ज्ञान का घट बीच दीपक जल गया
 काम क्रोधादिक सभी पद चाप सुन धबरा गये
 शत्रु मेरे मित्र बदने के लिये अकुला गये
 वन गये गुरुदेव बगला अम्बथ्री मेरे लिए
 देखकर दहला सभी नहला स्वयं दहला गये



तप्त मन के हेतु तुम आकाश के जलधर बने
 शप्त जीवन के लिये साक्षात् गङ्गाधर बने
 पर कटे से प्राण के पंछी तड़पते थे विकल
 चेतना भर कर स्वयं, गुरुदेव ! नीलाम्बर बने

पड़ कमल मृत प्राय से, पीताम्बर पाकर खिल गये
 पाप के गढ़ पुण्य-शर-संधान से ही हिल गये
 जिस समय, गुरुदेव ! तब चरणारविन्दों को लखा
 आत्मा बोली कि - लो भगवान तुमको मिल गये

दिग्भ्रमित जलपोत के हित ज्योतिमय ध्रुवध्येय हो
 गायकों के ज्ञेय हो तुम ज्ञानियों के ज्ञेय हो
 कल्पना-प्रिय के लिए तुम काव्य के श्रृङ्गार हो
 तुम स्वयं साकार शंकर के लिये उपमेय हो



ओ जीवन के लक्ष्यभूत ! ओ जीवन मेरे !
ओ प्राणों के हंसनाद ! सुस्पन्दन मेरे !

ओ मेरे गन्तव्य, गमय, गामक, गतिदाता !
क्रिया और प्रतिक्रिया विधा के मूल-विधाता,
सुनो, भंग करने को तुमने मेरा सपना
क्या न दिया था मुझे स्वयं हो परिचय अपना ?

भू पर नभ में वाम नेत्र शशि संयुत काया
क्या तुम पीता नहीं स्वयं सुस्तम्भन—माया ?
क्या न पीत आलोक लोक में किया प्रकाशित
क्या तुम से ही नहीं अखिल ब्रह्माण्ड सुभाषित ?

पहिले परिचय दिया, वेष सन्यासी धारा
पीता बन क्या नहीं तुम्हीं ने मुझे उवारा ?
पुरुष बने शिवलिङ्ग लिङ्ग तीनों से न्यारे
ओ हिरण्य—मय देव ! सकल ब्रह्माण्ड सहारे !

जो प्रकाश यह दिया करो शाश्वत जीवन में
पीता बनकर उदित रहो निशि दिन मम मन में !



तुम चिद्विलास के कर्ता, भर्ता जग - जग के,
 तुम परम ज्योति के स्रोत अनश्वर सविता के
 तुम प्रेम तत्व के मूल कूट अन्तर्यामी
 तुम स्नेह- सरित के कूल सरसता शुचिता के

तुम देशकाल से हीन, उभय के संचारी
 तुम त्रिपुर सुन्दरी रूप, तुम्हीं हो त्रिपुरारी
 तुम आध्यात्मिक सौन्दर्य, विश्व चेतन-कारी
 तुम कोटि- कोटि ब्रह्माण्ड विधायक, संहारी

तुम सत्य ज्योति के रूप साक्ष्य संवलता के
तुम अन्तर्नादि प्रणेता चेतन सत्ता के !

तुम नेति- नेति अनुभूति वेद की वाणी के
तुम प्रणव, शब्दमय ब्रह्म महा विज्ञानी के
हे विश्व नियामक प्रभो ! तुम्हारी जय-जय हो
मम प्राण, हृदय मन, बुद्धि तुम्हीं में ही लय हो

तुम परिवर्तन से हीन स्वयं परिवर्तन हो
हे स्वयं भूत आधार अहंता भविता के

हे सगुण, अगुण, हे गुणतीत, जय हो जय हो
हे त्रिगुण, विगुण, हे धी अतीत, जय हो जय हो
हे सप्त भूमि के सृजन गीत, जय हो जय हो
हे चिदानन्द, महिमा पुनीत, जय हो जय हो

हे अचल ! तुम्हीं आधार मूल गति त्वरिता के
हे वर्णन पर ! तुम मूल भाव युग-कविता के

ता के
के !



इन निर्वल पंखों से कैसे मैं नाप सकूंगा नीलाम्बर
इतना पात्रत्व कहां मुझमें जो चाप सकूंगा सत्वर
ओ गहन सिन्धु ! मैं कीट भला, क्या थाह पा सकूंगा तेरी
ओ तेज पुंज ! सन्मुख आने को क्षमता हो कितनी मेरी

मैं तो वस, इन चरणों की ही यदि धूलि सदा को जाऊँ
होकर कृतार्थ, लय हो उसमें, चिर शांति वहीं से जाऊँ

इस ब्राह्मरूप से ही मैं तो अभिभूत हो गया हूँ, स्वामी !
अन्तर की भव्य शक्तियों को जाने कैसे पद-अनुगामी
हे आशुतोष ! निगमागम का संदेश सुनाने आये हो
या अज्ञ मृतक को ज्ञानामृत शनिमौलि पिलाने आये हो

हो जाय रसस्विनि ममरसना यदि गीति तुम्हारे गा पाऊँ
होकर कृतार्थ, लय हो उसमें, चिरशांति वहीं से पाजाऊँ

जग गये कौन संस्कार, प्रभो ! अपनाया है मुझसा अबोध
जब भ्रान्त हुआ अपने पथ से करवाया तुमने दिशा बोध
इससे बढ़कर सौभाग्य किसे कहते हैं, स्वामिन् ! वसुधा में
गुरुदेव स्वयं ही मिल जावे जब जीव विकल हो दुविधा में

मिल गये मुझे मृत्युन्जय ही चरणों में शीश नमा पाऊँ
होकर कृतार्थ, लय हो उसमें, चिरशांति वहीं से पाजाऊँ

हो
के

के
के



शीश पर गुरुदेव का दिन रात छाया हाथ है
 प्रणत प्रति पल श्री-चरण-रज में हमारा माथ है
 शारदा मां स्वयं वन्दन गीत गाती है, प्रभो !
 काव्य का उद्गम तुम्हारे नाम से, श्रीनाथ ! है

यह तमिस्रा है न, तम मिस असित मसि लिपि माल है
 कृष्ण अणु-प्रति-शब्द में गुण-ग्राम लिखित विशाल है
 पढ़ रहा हूं, लिख रहा हूं, बोध कुछ मुझको नहीं
 काव्य देवी स्वयं वन्दन कर रही सब काल है

गुरु कृपा से ही गिरा से रस टपकता जा रहा
 ज्ञान का घट दिव्य मानस में छलकता जा रहा
 देव के निः श्वास का अनुभव हुआ आकाश में
 सरस रस का एक जलधर-सा बरसता जा रहा



यही वर दो हे जगदाधार ;

अम्ब शारदा की मुञ्जित हो प्रति पल नव झंकार
यही वर दो हे जगदाधार !

हृदय में भर दो दृढ़ अनुराग

तपस्या का अनन्त विश्वास

बनो तुम अम्बर के घनश्याम

बनूँ मैं चातक की चिर प्यास

लिये श्रद्धा की दृढ़ पतवार प्रभो ! मैं मिलूँ कुल के पार

यही वर दो हे जगदाधार !

धर्म पथ पर धोरज के पांव
 बढें अविरल प्रतिपल निर्भीक
 तुम्हारे पद के चिन्ह प्रमाण
 बने मम जीवन की दृढ़ लीक
 जगाओं मुनिशों का सद्ज्ञान, मचल जाये सोये संस्कार
 यही वर दो जगदाधार !

निखर जावे मन मुकुर मलीन
 बिम्ब का बना रहूं प्रतिबिम्ब
 रहो तुम मेरे प्रभु, श्रीनाथ
 तुम्हीं हो मेरी मां, जगदम्ब
 छेड़ दो वीणा में झंकार, बहा दो रसना में रसधार
 यही वर दो हे जगदाधार !

तुम्हारे कुल पथ पर दिन रैन
 अग्रसर होवें मन के पांव
 चेतना सुधा-सिन्धु बन जाय
 तुम्हारी गोद बने प्रिय गांव !
 सुन दो प्राणों को चुपचाप, नाथ ! अब बिन्दु-नाद झंकार
 यही वर दो हे जगदाधार !

कीक

कीक
सोये संस्कार
जगदाधार !

व

रसधार
दाधार !

ज्ञकार
धार !



सच्चिदानन्द नाथ-वनखण्ड

ज्ञानमय शिव के विमल स्वरूप, कर्ममय पीता परम प्रचण्ड

सच्चिदानन्द-नाथ वनखण्ड

धर्म के जाग्रत पुण्य प्रताप
यज्ञ के परम पुरुष निष्पाप
तत्त्व उपनिषदों के साक्षात्
ज्ञान रवि के अरुणाभ प्रभात

सत्य के सार, ध्यान के ध्येय, आस्था ध्रुव निष्कम्प अखण्ड
सच्चिदानन्द नाथ-वनखण्ड

साधना, साध्य दिव्य आचार
नव्य लीला तनु, भव्याकार
अगम को करती सुगम ललाम
प्रभो ! तब करुणा भरी निहार

स्वयं ही सिद्ध हुआ प्रणतार्त्त, नष्ट हो गये सकल पाखण्ड
सच्चिदानन्द नाथ वनखण्ड

नाथ का प्राप्त हुआ वात्सल्य
करुंगा क्या लेकर कैवल्य
चरण रज स्पर्श मात्र से नष्ट
स्वयं ही होता संसृति शल्य

प्रणत पद रज में विश्व वरेण्य प्रकाशित कोटि-कोटि मार्त्तण्ड
सच्चिदानन्द नाथ वनखण्ड

कम्प अखण्ड

थ-वनखण्ड



पाखण्ड

वनखण्ड



पार्तण्ड

खण्ड

कार्य में गुरुदेव के मन प्राण तन्मय हो गया
 ध्यान में श्रीनाथ के मम रूप चिन्मय हो गया
 अंगुली निर्देश से सम्भव असम्भव हो गये

पादुका के ज्ञान से सौभाग्य अक्षय हो गया
 हृदय में अमृत तरङ्गित आज मणि भू-कूल है
 सहस्र-दल-मय-छत्र-धर श्रीनाथ सुख के मूल हैं

श्री कृपा की प्राप्ति से अनुकूल हैं संसृति सकल,
 आज भव का शूल मम हित सरस चम्पक फूल है



देवताओं की विविध विधि साधनाएं छोड़ दीं
पाठ पूजा के नियम की दृढ़ विधाएं तोड़ दीं
हो गया निश्चिन्त मन में प्रेम से कर जोड़कर

वृत्तियां सम्पूर्ण श्री गुरु-ध्यान में ही मोड़ दीं
अर्चना से ही नहीं पल में विमल मन बन गया
पाद पारस स्पर्श से ही शुद्ध काञ्चन बन गया
हो गया निभ्रान्त संशय ग्रंथियों को भेदकर

ज्ञान के दृग खुल गये, शिव का गजानन बन गया
सिद्धियां आकर हमारे पांव धोने लग गईं
सहस्र दल के कमल की सोई पंखुरिया जग गईं

नाथ की श्री पादुका का ध्यान श्रद्धा से किया

भगवती उर बस गई जग वासनाएं भग गईं
गुरु कृपा है तो करें किसकी सपर्या, आरती
गा रही जिनकी अर्हनिशि गुण-कथाएं भारती

एक ही संकेत गुरु ने पुत्र के प्रति कर दिया

दश महा विद्या विवश होकर मुझे पुचकारतीं ।

रणम्

ोड़कर

भेदकर

किया

दिया



तुम्हारी आरती के संग सुरभित धूप बन जाऊँ
तुम्हारे ध्यान में तल्लीन हो तद्रूप बन जाऊँ

सदा गुरुदेव गौरव गीत का गुञ्जार होता हो
कृपा की कोर से संसार में मैं सुप बन जाऊँ

तुम्हारी अर्चना का भव्यतम उपकरण बन जाऊँ
तुम्हारे ज्ञान के अनुबंध का उद्धरण बन जाऊँ

सरलता से गहन भव-सिन्धु-जलमें संतरण होगा
तुम्हारे पंथ के पदचिन्ह का अनुकरण बन जाऊँ



तीन तेरह में पड़े अब मूढ़ मन क्यों व्यर्थ हो
 तुम भजो गुरुदेव को आये यहां जिस अर्थ हो
 एक पल में 'छत्रपति' सम्राट जो देते बना
 हे प्रभो, गुरुदेव ! तुम ही सर्वकाल 'समर्थ' हो

पुरश्चरणों के बिना ही मन्त्र मम चैतन्य है
 गुरु कृपा से भुक्ति क्या, कैवल्य आज नगण्य है
 गुरु चरण-रत सर्वदा रहता 'शिवोऽहं' भाव में
 देवता कहते गहन से धन्य है, तू धन्य है

कौनसा संकल्प है जो पूर्ण हो सकता नहीं
 कौन कहता बीज ऊसर बीच फल सकता नहीं
 दूढ़ भरोसा है मुझे गुरुदेव बगला-अम्ब का
 शत्रु यम भी चैन से क्षण मात्र सो सकता नहीं

गह, रे,
 रे मन

मान स
 रजत-

त्रेती
 किया

मुक्त
 होता,

रे, मन



गह, रे, ! श्री गुरु चरण कमल

रे मन ! भटक नहीं जग वन में, वनखण्डी मग चल

गह, रे ! श्री गुरु चरण कमल

मान सरोवर सा तडाग शुचि ललित लहर झिलमिल

रजत-राजि श्री वदन चन्द्रिका आवृत तट निर्मल

गह, रे ! श्री गुरु चरण कमल

त्रेती युगी अगस्त्याश्रम ने दशमुख भीति विकल

किया दान ब्रह्मास्त्र राम को एक मात्र निश्छल

गह, रे ! श्री गुरु चरण कमल

मुक्त हस्त ब्रह्मास्त्र दान वह जहां नित्य प्रतिपल

होता, मुञ्जसा प्राप्त अभागा करता चारों फल

गह, रे ! श्री गुरु चरण कमल

रे, मन ! भटक नहीं जग वन में वनखण्डी मग चल



रे मन ! तज कामिनि, कञ्चन

श्री गुरु जगदम्बा चरणों में कर अर्पित तन मन !

रे, मन ! तज कामिनि कञ्चन

कृपा कोर कर प्राप्त नाथ की रस मय कर जीवन

अदभुत पास— राज प्राप्त कर स्वयं सुपारस बन !

रे, मन ! तज कामिनि, कञ्चन

भूल न अनुभव— भोग योग—मयि श्री पद रज पावन

त्याग— राग वश भाग्य न निज कर से यों कर भंजन !

रे, मन तज कामिनि, कञ्चन

शुक्ल प्रभा आवृत अग जग लख, सुन अनहद निस्वान

गुरु-पद-भक्तिमत्त सब अग जग का अनुशासक बन !

रे मन ! तज कामिनि कञ्चन

रे, मन

तू ने बां

मन्द—मन

नित्य प्र

देख तनि

गुरु—सुर

मत्त—वृष

सत्यं, शि



रे, मन ! व्यर्थ बड़ी उलझन !

तू ने बांध लिया क्यों निज को कर कल्पित बंधन !

रे, मन व्यर्थ बड़ी उलझन !

मन्द-मन्द मुस्कान माधुरी, करुणामयी चितवन

नित्य प्रतीक्षा सी करती, रे ! प्रभु की भय भञ्जन

रे, मन, व्यर्थ बड़ी उलझन !

देख तनिक यह डगर सुहानी धन्य बने जीवन

गुरु-सुर-धेनु पयामृत पी ने निर्भय छौना बन !

रे, मन, व्यर्थ बड़ी उलझन !

मत्त-वृषभ-सा शक्ति चूर हो तज दे भार वहन

सत्यं, शिवं सुन्दरं हो जा, मन से हो निर्मल

रे, मन, व्यर्थ बड़ी उलझन !



जब

गा

प्राण में चेतन्य की क्षण में प्रतिष्ठा हो गई
 श्रीतत्व का दर्शन हुआ दृढ़ आत्मनिष्ठा हो गई
 दृष्टि पड़ते ही तुम्हारी सृष्टि सारी माँ बनी
 वृष्टि होते ही सुधा की कृष्टि लहटा हो गई

मूर्ति की प्रति मूर्ति गुरु के ध्यान से ही बन गया
 कीर्त्ति गाते ही तुम्हारी मान मैं ही बन गया
 पादुका को पूजने के हेतु मैं आगे बढ़ा
 पादुका की रंज बना श्री पादुका ही बन गया

रंक्त पद से शुक्ल पद को दृष्टि जो मेरी गई
 मिश्र पद की क्रान्ति में छिटकी प्रभा ऐसी नयी
 वाणी कामाक्षरमयी जब शक्ति नव-गुंजित हुई
 देखने वाला मिटा क्या देखता सुस्थिति सही ।

मौ



जब तुम्हें पहिचानने का यत्न करता हूं
 बुद्ध क्या मैं 'आत्मा का बोध होता हूं
 गा रहा हूं गीत गुरु के ही गुणों के मैं
 अवगुणों का सत्त्वमय परिशोध होता हूं

कल्पना है कह रही तुम और आगे हो
 अर्चना कहती अभी तक तुम अपूजे हो
 तृप्ति की भी प्यास बढ़ती जा रही प्रतिपल
 कह रहीं अनुभूति तुम कुछ और ऊंचे हो

शब्द की असमर्थता, अभिव्यक्ति कुण्ठित है
 गोद में आकर स्वयं ही गोद होता हूं

भावना कहती सुधा के सिन्धु हो, भगवन् !
 ज्ञान कहता है-परम अज्ञेय तुम ही हो
 ध्यान के ध्रुव ध्येय कवि के काव्य के उद्गम
 साधना के तत्त्व, श्रुति के श्रेय तुम ही हो

मौन हो जाती तुम्हें वाणी 'अकथ' कहकर
 ध्यान करते ही मुदित क्या मोद होता हूं ।



लिङ्गवत् आराध्य पल में हो गया पाषाण है
विन्दुवत् यह जीव क्षण में बन गया भगवान है

बुलबुला खारा सुधा के सिन्धु में परिणित हुआ
विश्व में ब्रह्मास्त्र श्री गुरुदेव का वरदान है

रस सुधा के सिन्धु में मन-बुलबुला लय हो गया
लख वराभय पाणि को नरसिंह निर्भय हो गया

सींचते गुरुदेव अमृत का कलश ले हाथ में
कल्पतरु सम बीज फल दाता विजय का हो गया

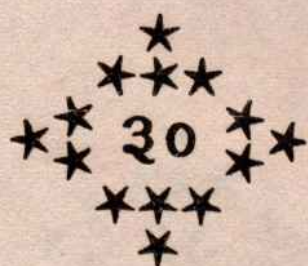
दूढ़ करों में कीर्तिमय श्रीनाथ का ही केतु हो
अगम भव के सिन्धु में गुरुनाम मेरा सेतु हो
साधना का साध्य है आराधना गुरुदेव की
जन्म श्री गुरुदेव के पद चापने के हेतु हो



मैं तुम्हारी चेतना से युक्त हूँ, स्वामिन् ;
मैं तुम्हारी भावना का भक्त हूँ, स्वामिन्

तुम हमारी कल्पना के छन्द हो, भगवान् !
अर्चना के मन्त्र हो अनुबन्ध हो भगवन् !
तुम हमारे ज्ञान के परतत्त्व हो, स्वामिन् ;
तुम हमारी शक्ति के सत्, सत्व हो, स्वामिन् !

ज्योति नख से दीप्त आभा की झलक हूँ मैं
देखती रहती चरण ऐसी पलक हूँ मैं



यह क्षण कितने सुन्दर बीते, यह जीवन कितना सुन्दर है
रमा हुआ मन श्रीचरणों में, छलका सरस सुधा-सागर है

अचल—हिमाचल बना हुआ मैं
बने हुये प्रभु सिन्धु किनारा
बही जा रही उमग—उमग कर—
श्रद्धामय गंगा की धारा

कलियुग में ही प्रकट हो गया मानो सतयुग अविनश्वर है
यह क्षण कितने सुन्दर बीते, यह जीवन कितना सुन्दर है

धन्य भाग्य हो गई लेखनी
श्रीप्रभु का गौरव गुण गाकर
हर्षित हुई शारदा—माता
शुचि प्रसाद गीतों का पाकर

शिलान्यास कर दिया कृपा ने निर्मित हुआ काव्य मंदिर है
यह क्षण कितने सुन्दर बीते, यह जीवन कितना सुन्दर है



सुधा-सिन्धु सा सरस बना जीवन का सागर खारा
आलोकित हो गया ध्येय मय साधन का ध्रुव तारा

भटक रही थी भ्रान्त आस्था, भ्रमित तर्क युत शंका
भड़क रही थी भोगवाद की महा भयानक लंका
जगे-पुण्य संस्कार तभी मैं द्वार तुम्हारे आया
रोम-रोम में महाशक्ति का अभिनव मन्त्र जगाया

श्री चरणों में शिष्य भाव से शीश प्रेम से धारा
संशय रहा न शेष खुल गया परम मुक्ति का द्वार

और बुद्धि के ऊपर फिर से विजय हृदय ने पाई
 खुले ज्ञान के नेत्र, चेतना ने ले ली अँगड़ाई
 मन के मान-सरोवर में औ; ब्रह्म-सुता लहराई
 महा-शक्ति के वीर पुत्र ने जाग भैरवी गाई

मातृ-प्रेम-रस शिशु-मन में हो गया घना हो गाढ़ा
 काम क्रोध के षड्रिपुओं पर निर्भय सिंह दहाड़ा

अंधकार मिट गया, हुआ ज्योतिर्मय सारा जीवन
 कृपाकोर से बिना यत्न ही सुना अनाहत निस्वन
 फूट पड़ी रस धार हृदय से डूबा जग का कण-कण
 काव्यमयी वाणी का व्यापा दश दिशि मादक गुञ्जन

वालमीकि बन गया कृपा पा रत्नाकर हत्यारा
 'मरा-मरा' तक रटा न जिसने वैभव नाथ तुम्हारा



सुधा सिन्धु कर दिया तरङ्गित प्रभु के करुणा-सिक्त नयन ने

पादप हीन मनोरम वन है
वधिर सुन रहा मधुरिम धुन है
बिन नयनों के छबि दर्शन है
बिन वाणी गुञ्जित निस्वन है

है परिपूर्ण सुधामृत से घट अभय किया भव भय भञ्जन ने
सुधा सिन्धु कर दिया तरङ्गित प्रभु के करुणा-सिक्त नयन ने

अकथनीय मस्ती में मन को
 खोया-सा अनुभव करता हूं
 प्रभु के मृदुल स्पर्श से स्पन्दित
 प्रतिपल गति अभिनव करता हूं

सरस कर दिया ज्वलित मरुस्थल प्रभु के अमृत मय वर्णन ने
 सुधा सिन्धु कर दिया तरङ्गित प्रभु के करुणा सिक्त नयन ने

नाथ, तुम्हारी करुणा का क्या
 मोल चुकाया जा सकता है
 जो जीवन है, जीवन कैसे
 उसे चढ़ाया जा सकता है ?

हे अनमोल ! मोल आंका है अन्तर तम के भाव सुमन ने
 सुधा सिन्धु कर दिया तरङ्गित प्रभु के करुणा-सिक्त नयन ने



इधर लेखनी चली रसस्विनि-भुक्ति-मुक्ति का द्वार खुल गया
लिखे नहीं, लिख गये गीत तब, स्वयं सृष्टि का सार मिल गया

कलम बन गई सरस कल्पना
छन्द बनी नीली मसियानी
शब्द-शब्द में लगी गूँजने
वीणा-पाणि ! तुम्हारी वाणी

जगदम्बा से अम्ब बने प्रभु, मां का सहज दुलार मिल गया
लिखे नहीं, लिख गये गीत तब, स्वयं सृष्टि का सार मिल गया

सांस-सांस बन गई सुमरनी
 सूर्य' सूर्य' की बनी आरती
 आत्म तत्त्व अनुभूति- सिक्त हो
 छन्द बन गये ज्ञान- भारती

मौन रहे स्वर लहरी कैसे, झंकृत मधुर सितार मिल गया
 लिखे नहीं, लिख गये गीत तब, स्वयं सृष्टि का सार मिल गया

चरणों की रज बना नाथ की
 पद रज से भू तीर्थ हो गई
 घट-घट में चैतन्य मिल गया
 घटी- घटी सुमुहूर्त हो गई

प्रभु का दर्शन हुआ कि क्षण में दर्शन का आधार मिल गया
 लिखे नहीं, लिख गये गीत तब, स्वयं सृष्टि का सार मिल गया

रस की गंगा लगी छलकने
 प्रणव परा में लगा सिहरने
 काव्य लहर मेरे अभिनन्दन
 को स्वर-स्वर पर लगी लहरने

अनुपमेय, उपमेय मिल गया, महाभाव रस सार मिल गया
 इधर लेखनी चली रसस्विनि- भुक्ति-मुक्ति का द्वार खुल गया

नहीं
 नहीं
 प्राप्त
 तुम्हें
 तुम
 कर



ओ दतिया के दाता, मेरे भाग्य विधाता !
 स्पन्दन शक्ति स्वरूप, अचर के चर निर्माता !
 मेरे जीवन लक्ष्य, श्वास-प्रश्वास-प्रचारी
 ओ अनन्त ब्रह्माण्ड भेद दल सहस्र विहारी

नहीं कामना-प्राप्त तुम्हें कर पाऊँ, स्वामी !
 नहीं कामना-बनूँ श्रेष्ठ श्रीपद अनुगामी
 प्राप्त किया वात्सल्य, बहुत पाया, क्या लूँगा ?
 तुम्हें प्राप्त कर और द्वैत का सुख खो दूँगा ?
 तुम मेरे आराध्य रहो प्रति कल्प-कल्प में
 कर लूँगा संतोष, नाथ ! मैं इसी अल्प में

विवश कर वात्सल्य दान को तो यह पाऊँ
 मैं अनन्त कल्पों तक श्रीपद रजगुण गाऊँ

घिरे घटा घन घोर रोर कर चले प्रभञ्जन
 सराबोर कर गले भले उपलों का सावन
 बाधाओं पर बाधाएँ कितनी ही आयें
 जीवन नभ में भले शोक-बदली ही छायेँ
 कीर्ति लोक से टले, लोक-सुख सुविधा छूटे
 विश्व ग्रासिनी क्षुधा देह की शोभा लूटे
 गले रोग से अंग भले पीड़ा से टूटे
 प्राण विहग चाहे तन के पिञ्जर से छूटे

विवश करे वात्सल्य दान को तो यह पाऊँ
 नाम तुम्हारा निमिष-मात्र भी भूल न जाऊँ



आरती अकुल बिहारी की—देव, वनखण्डी चारी की

चरण रज अंजन सुखकारी
महा अज्ञान तिमिर हारी
दृष्टि गत दोष दलन कारी
दिव्यता, मुदिता संचारी

जयति सुख-सिन्धु, दीन के बन्धु, तत्त्व मय बिन्दु,
इन्दु-सी प्रभा प्रसारी की
आरती अकुल बिहारी की

चरण नख दिव्य प्रभाकारी
कोटि तम कलुष विलय कारी
अलौकिक जोवन संचारी
अज्ञता, पशुता संहारी

जयति, सुखधाम पूर्ण निष्काम, मनः विश्राम—
धाम, विज्ञान प्रचारी की
आरती अकुल बिहारी की

दिव्य काषायाम्बर धारी
 सौम्य, तेजस्वी, मन हारी
 परम उल्लास मूर्ति भारी
 भव्य आभा मंगल—कारी

सुनामानाम, अतुल गुण ग्राम, परम अभिराम
 काम सुन्दर तनु धारी की
 आरती अकुल बिहारी की

वाणि, हल्लेखा, श्री सुखधाम
 हसक्षमलवरयूँपूर्ण प्रकाम
 पादुका अर्चन तर्पण धाम
 गृहण मम करें अनन्त प्रणाम

जयति शिव रूप, कोटि जग भूप, स्वरूप अनूप
 रूप कलि कलुष विदारी की
 आरती अकुल बिहारी की



ओ जन-जन-मन-मन-भूमि-भूप तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम
ओ बुद्धि-सिद्धि के ऋद्धि-रूप, तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम

ओ अकल, कुलाकुल-कलाकार, अतिशय उदार
ओ निर्विकार तुमको प्रणाम !

ओ अमल, अबल-बल, प्रगट प्यार, महिमा अपार,
ओ चमत्कार, तुमको प्रणाम !

ओ आदि-शक्ति के पुरुष रूप, तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम
ओ जन-जन-मन-मन-भूमि-भूप, तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम

ओ विमल-कमल-दल-अमल-धाम, नयनाभिराम,
शोभा ललाम, तुमको प्रणाम

ओ तरल, गरल-मल-हरण नाम, गुण-गीति-ग्राम
श्रुति सार 'राम' तुमको प्रणाम

ओ अगुण,सगुण,गुण-गण स्वरूप तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम
 ओ जन-जन-मन-मन-भूमि-भूप, तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम
 ओ शमित-भ्रमित-भ्रम-पीर, धीर, पर पार तीर,
 ओ अकुल तीर, तुमको प्रणाम
 ओ अमित नमित-सुर-सिद्ध-वीर, जीवन समीर,
 भव, हरण भीर, तुमको प्रणाम
 ओ जन-मन-अणु-व्यापक,अनूप, तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम
 ओ जन-जन-मन-मन-भूमि-भूप, तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम
 ओ ललित, कलित, कल-कान्ति कान्त सागर प्रशांत
 मधुमय, महान्त तुमको प्रणाम
 ओ अचल-सचल, चल-अचल,-दान्त, निभ्रान्ति शान्त
 ओ सुख दुखान्त, तुमको प्रणाम
 ओ विविध रूप, अद्भुत अरूप,तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम
 ओ जन-जन-मन-मन-भूमि-भूप, तुमको प्रणाम, तुमको प्रणाम

श्री पीताम्बरा पीठ

के

प्रकाशन



श्री पीताम्बरा-पीठ के प्रकाशनों का उद्देश्य है- संस्कृत के प्राचीन, शास्त्रीय उपयोगी तथा मौलिक ग्रन्थों का प्रकाशन कर सर्व साधारण के लिये अल्प मूल्य में सुलभ कराना । इस प्रकार भारतीय संस्कृति एवं धर्म के प्रतीक दुर्लभ ग्रन्थों का संरक्षण एवं उनके द्वारा धार्मिक प्रचार ही हमारा लक्ष्य है । प्रकाशन के व्यापारिक लक्ष्य को कोई स्थान नहीं दिया गया है ।

इस प्रकाशन माला में अभी तक तन्त्र, दर्शन, योग, ज्योतिष, संगीत एवं वैदिक साहित्य आदि की दीप्तिमयी मणियां गुम्फित हो चुकी हैं । प्रमुख रूप से शाक्त धर्म के प्रतिपादक अनेक ग्रन्थों को प्रकाश में लाने का सौभाग्य पीठ को प्राप्त हुआ है । इस प्रकाशन माला में न केवल दुर्लभ प्राचीन ग्रन्थों को ही स्थान दिया गया है, अपितु "पञ्चोपनिषद्" (प्रकाशभाष्य) एवं "वैदिक उपदेश" जैसे सर्वथा मौलिक ग्रन्थों को भी समुचित स्थान प्राप्त हुआ है । संस्कृत न जानने वाले पाठकों की सुविधा को दृष्टि में रखकर कुछ पुस्तकों को हिन्दी अनुवाद सहित भी प्रकाशित किया गया है ।

प्रस्तुत सूची-पत्र में पीठ प्रकाशनों का संक्षिप्त परिचय मात्र दिया गया है । इनकी वास्तविक उपयोगिता का मापन तो विद्वज्जन ही इनके अवलोकन कर सकेंगे ।

—व्यवस्थापक

पीठ से प्रकाशित ग्रंथों पर विद्वानों की सम्मतियां

“पञ्चोपनिषद् पर सम्मति”

आगम प्रतिपादित शक्ति तत्त्व जिसका श्वेताश्वतर आदि उपनिषदों में संकेत है और पुराणों में विस्तृत विवरण है, उसके प्रतिपादित करने वाले अर्थों का सब उप-निषदों में आज तक किसी ने विवरण नहीं दिया... यह सब विचार कर आपके इन पाँच उपनिषदों के भाष्य को एक नया आविष्कार ही कहा जा सकता है ।

स्व० म० म० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी

वैदिक उपदेश पर सम्मति

वैदिक उपदेश में पूज्य स्वामी जी की व्याख्या आधुनिकतम विचार तथ्यों से सुसंगत है और अर्थों का रूप पूर्ण-तया वैज्ञानिक.... हिन्दी व्याख्या इतनी सरल और सुबोध की गई है कि साधारण हिन्दी पाठक भी सहज ही में समझ लेगा। हमारी प्राचीन संस्कृति का, धर्म का, दर्शन शास्त्र का बिल्कुल आधुनिक वैज्ञानिक साथ ही स्वाभाविक रूप वैदिक उपदेश में है.... घर-घर में पुस्तक हो जन-जन के हाथ में और मन में इसकी पहुंच हो मेरी तो यह कामना है ।

पद्म-भूषण स्व० डॉ० वृन्दावनलाल वर्मा

इन दोनों ही भागों में वेदों से ऋचायें निकाल कर सर्व प्रथम उनका शाब्दिक अर्थ दिया गया है तथा बाद में उनकी संक्षिप्त व्याख्या है . व्याख्या सरल भाषा में है, संक्षिप्त है और उनका सार दे दिया गया है ये तीनों ही गुण व्याख्या को जन सुलभ बनाते हैं । इस पुस्तक के द्वारा हम इतना अवश्य जान सकते हैं कि वेद क्या है ? उनकी ऋचायें मृत नहीं आधुनिकतम हैं... ऋचाओं के विषय में विशेष ध्यान रखा गया है कि उनका क्षेत्र इतना व्यापक हो कि हर रुचि के प्राणी को अपनी रुचि अनुसार ऋचायें प्राप्त हो सकें... ये दोनों खण्ड हमारे लिये आज बहुत ही उपयोगी है हम इनका अधिकाधिक प्रचार चाहते हैं ।

श्री नारायण चतुर्वेदी

नाम ग्रन्थ	भाषा	मूल्य
१ श्री बगलामुखी रहस्यम् परम पूज्य श्री १००८ श्री स्वामी जी महाराज द्वारा प्रणीत । प्रस्तुत ग्रन्थ में श्री बगलामुखी महाविद्या विषयक यावत् उपलब्ध समस्त साहित्य एवं तान्त्रिक साधना के अनेक गुह्य रहस्यों का संकलन किया गया है ।	संस्कृत	३०-००
२ पञ्चोपनिषद् (प्रकाश भाष्य) परम पूज्य श्री स्वामी जी महाराज कृत ईश केन, कठ, मुण्डक एवं माण्डूक्य उपनिषदों का आगम परक प्रकाश भाष्य ।	संस्कृत	१०-००
३ प्रश्नोपनिषद् (प्रकाश भाष्य) परम पूज्य श्री स्वामी जी महाराज कृत शाक्त सिद्धांतानुसार प्रणीत प्रकाश भाष्य ।	संस्कृत	१-००
४ सौन्दर्य लहरी डिण्डिम भाष्य एवं गोपाल सुन्दरी टीका सहित प्रस्तुत ग्रंथ अज्ञावधि अप्रकाशित व अनुपलब्ध राम कविकृत डिण्डिम भाष्य एवं गोपाल सुन्दरी टीका सहित प्रकाशित हुआ है ।	संस्कृत	७-००
५ शिवसूत्र भक्ति सूत्रञ्च परम पूज्य श्री स्वामी जी महाराज कृत ऋग्वेदार्थ बोधिनी वृत्ति सहित संस्कृत एवं दर्शन शास्त्र के विद्वानों के लिये ग्रन्थ संग्रहणीय है ।	संस्कृत	३-००

नाम ग्रन्थ	भाषा	मूल्य
६ नारदीय शिक्षा (भट्ट शोभाकर कृत शिक्षा विवरणोपेता टीका सहित) (प्रस्तुत ग्रन्थ संस्कृत के विद्वानों, सामवेद के पाठकों एवं संगीत शास्त्र के प्रेमियों के लिये समान रूप से उपयोगी है)	संस्कृत	६-००
७ घेरण्ड-संहिता (परम पूज्य श्री स्वामी जी महाराज कृत) (घेरण्ड मुनि द्वारा विरचित घेरण्ड-संहिता योग शास्त्र का महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। हठयोग ही क्रियाओं का सबसे अधिक वर्णन इस ग्रन्थ की किया गया है। यह तान्त्रिक साधना के मत का ग्रन्थ है।)	भाषानुवाद सहित	८-००
८ प्रत्यभिज्ञाहृदयम् [शाक्तदर्शन] (इस ग्रन्थ में शाक्तदर्शन के आधारभूत ग्रन्थ, प्रत्यभिज्ञाहृदय, षट् त्रिशत् तत्त्व सन्दोह एवं परा प्रावेशिका का मूल सहित अनुवाद दिया गया है।)	भाषानुवाद सहित	यन्त्रस्थ
९ ईश्वर-गीता (इस ग्रन्थ में महर्षि कृष्णद्वैपायन प्रणीत कूर्म पुराण के अन्तर्गत ईश्वर-गीता की पूज्य श्री स्वामी जी महाराज द्वारा सरल सुन्दर भावार्थ दीपिका नामक व्याख्या हिन्दी में दी गयी है।)	भाषानुवाद सहित	६-००

नाम ग्रन्थ	भाषा	मूल्य
१० वैदिक उपदेश परम पूज्य श्री स्वामी जी महाराज कृत वैदिक मन्त्रों की सरल, सुबोध एवं आधुनिकतम व्याख्या)	हिन्दी	१०-००
११ पुरश्चरण पद्धति यशस्वी लेखक विद्या भूषण कुलमार्तदण्ड स्व० पण्डित योगीन्द्र कृष्ण दौर्गादित्ति जी शास्त्री ने अनेक शास्त्रीय प्रमाणों से गर्भित इस ग्रन्थ रत्न को लिखकर मंत्रयोग के साधकों के लिये बड़ा ही उपकार किया है। अभ्यास आरम्भ के दिन से सिद्धिपर्यन्त किन-किन बातों की साधक को आवश्यकता होती है, सुगम-रीति से समझाया गया है।	हिन्दी	३-००
१२ अथर्ववेदाङ्ग ज्योतिष (अथर्ववेदाङ्ग ज्योतिष पुस्तकाकार रूप में भाषानुवाद सहित सरल भाषा में सर्वप्रथम प्रकाशित किया गया है।)	भाषानुवाद सहित	३-००
१३ वेदान्त प्रबोध अनुवादक एवं संपादक (डॉ० शिव शरण शर्मा शास्त्री) (श्री स्वामी सत्यबोधाश्रम विरचित यह वेदान्त का प्राचीन एवं अद्यावधि अप्रकाशित ग्रन्थ प्रस्तुत किया गया है।)	सानुवाद	१०-००

नाम ग्रन्थ	भाषा	मूल्य
१४ सौन्दर्य-लहरी (अनुवादक-श्री बलवीरसिंह फौजदार) सौन्दर्य-लहरी साहित्यिक सौन्दर्य से परिपूरित होने के साथ ही साधना मार्ग का सुप्रसिद्ध स्तोत्र ग्रन्थ है ।)	पद्यानुवाद सहित	यत्रस्थ
१५ लेख-संग्रह परम पूज्य स्वामी जी महाराज कृत शाक्तमत के लेखों का संग्रह ।	हिन्दी	१२-००
१६ सिद्धांत-रहस्य परम पूज्य श्री स्वामी जी महाराज कृत इस ग्रंथ में आध्यात्मिक, योग, उपासना एवं भक्ति आदि सिद्धांतों का वर्णन किया गया है ।	हिन्दी	५-००
१७ त्रिपुरा-महिम्न स्तोत्र महर्षि दुर्वासा कृत शक्ति महिम्न स्तोत्र अनुवादक एवं व्याख्याकार-स्व० पं० योगीन्द्र कृष्ण दौर्गादत्ति शास्त्री)	भाषानुवाद	६-००
१८ तांत्रिक पञ्चांग यह श्री विद्या के पूजन के काल निर्णय का सर्वप्रथम प्रकाशित अभूतपूर्व पञ्चांग है ।		११-००
१९ पञ्चस्तवी (श्री विद्या के दो एवं श्री पीताम्बरा माता के ३ स्तोत्रों का संग्रह)	संस्कृत	२-००

२० दर्शन शास्त्र संग्रह [सब दर्शनों का अपूर्व ग्रन्थ]	८-००
२१ तारा कर्पूर स्तोत्र	४-००
२२ मातृका चक्र विवेक	हिन्दी अनुवाद सहित १५-००
२३ वातुलनथ सूत्र	हिन्दी अनुवाद सहित २-००
२४ शरभ साहित्य	यंत्रस्व
२५ स्वरोदय-साहित्य	४-००
२६ चिद्-विलास	हिन्दी-संस्कृत टीका सहित ४-००

मुद्रक :
आकाश आर्ट प्रिंटर्स,
बिहारी जी मार्ग दतिया